प्रकाशित: 24 जनवरी 2018 नेशनलिस्ट ऑनलाइन पर प्रकाशित -

खुद ही अपनी कब्र खोद रहे वामपंथी दल !

कार्ल मार्क्स ने एक बार कहा था- "हर सवाल पर तर्क दिया जा सकता है। हां, ये जरूरी नहीं है कि वो तर्कपूर्ण ही हों।" मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी (माकपा) में यही हुआ। कांग्रेस के साथ तालमेल करने के प्रस्ताव को वहां गत दिनों जिस प्रकार से खारिज किया है, उसके बाद ये संभावना कम बचती है कि वामदल समय के साथ चलने के लिए तैयार होंगे। वामपंथ की मौजूदा जमीनी हकीकत से वाकिफ माकपा महासचिव सीताराम येचुरी का कहना था कि माकपा को कांग्रेस के साथ मिलकर राजनीति करनी चाहिए।

मगर, इस प्रस्तान को पार्टी के प्रकाश करात खेमे ने ये कहते हुए खारिज कर दिया कि इस तरह का कोई भी कदम उठाना माकपा की विचारधारा के साथ समझौता करने के समान होगा। कांग्रेस से वामपंथी दलों की खूब सांठ-गांठ रही है, ऐसे में अब प्रकाश करात विचारधारा से किस समझौते की बात कर रहे हैं, ये समझना मुश्किल है।

नकारा विपक्ष

येचुरी की ओर से तैयार मसौदे में इसकी पैरवी की गई थी कि कांग्रेस से तालमेल किया जाए। पोलित ब्यूरो के सदस्य प्रकाश करात की अगुवाई में केरल के प्रतिनिधियों ने प्रस्ताव के खिलाफ मतदान किया। लोकतंत्र में सशक्त विपक्ष के लिए विशेष स्थान माना गया है। इस आलोक में माकपा या बाकी वाम दलों की भूमिका तो बनती है। पर ये दल अपने को नए सिरे से परिभाषित करने के लिए तैयार ही नहीं हैं। माकपा की स्थिति तो वास्तव में बेहद दयनीय हो चुकी है।

एक दौर में माकपा पश्चिम बंगाल में सरकार में थी, उसका वहां मजबूत कैडर था। आज पश्चिम बंगाल से उसका कोई भी सदस्य राज्य सभा तक में नहीं है। कभी वाम मोर्चा का गढ़ रहे पश्चिम बंगाल में उसकी दूकान बंद होती जा रही है। वहां 2011 के विधानसभा चुनाव में उसे 41.0 फीसद मत मिले। यह आंकड़ा 2014 के लोकसभा चुनाव में 29.6 फीसद रह गया। अब आया 2016 का विधानसभा चुनाव। अब लेफ्ट पार्टियों को मिले 26.1 फीसद वोट। यानी गिरावट का यह सिलसिला लगातार जारी है। भारतीय जनता पार्टी का असर वहां पर बढ़ता जा रहा है।

अपनी कब्र खोदते वामपंथी दल

वाम दलों को अब अपने वजूद को कायम रखने के लिए जनता के बीच में अधिक काम करना होगा। जनता से जुड़े मुद्दों पर संघर्ष करते रहना होगा। इन्हें देश के राजनीतिक पटल से पूरी तरह से खारिज होने से अपने को बचाने के लिए काम करने की जरूरत है, लेकिन ये तो अपनी कब्र खोदने पर आमादा दिख रहे हैं। विगत वर्ष उत्तर प्रदेश विधानसभा के चुनाव के नतीजों ने स्पष्ट कर दिया था कि लेफ्ट पार्टियां देश की राजनीति में अप्रसांगिक होती जा रही हैं। इनकी नीतियों और कार्यक्रमों को जनता स्वीकार करना तो छोड़िये, सिरे से ख़ारिज कर रही है। उत्तर प्रदेश चुनाव में पहली बार भाकपा, माकपा और भाकपा(माले) ने विधानसभा चुनावों के लिए साझा प्रत्याशी उतारे। उन्होंने सौ सीटों पर कम से कम 10 से 15 हजार वोट हासिल करने का लक्ष्य रखा। वामदलों से सीताराम येचुरी, डी.राजा, वृंदा करात, दीपांकर भट्टाचार्य जैसे नेताओं ने जमकर प्रचार किया। लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। आंकड़े गवाह हैं कि करोड़ों की आबादी वाले उत्तर प्रदेश में वामदल कुल मिलाकर 1 लाख 38 हजार 763 वोट ही हासिल कर सके। यह कुल मतों को .2 प्रतिशत होता है। वहीं नोटा के लिए प्रदेश की जनता ने 7 लाख 57 हजार 643 वोट दिए, यह करीब .9 फीसदी बैठता है।

<u>जन भावनाओं की अनदेखी</u>

वाम दलों का नेतृत्व पिछले पचास दशकों से जन भावनाओं से पूरी तरह से हटकर सोच तो रहा है। इसका एक उदाहरण ले लीजिए। यह बहुत पुरानी बात नहीं है, जब केन्द्र सरकार ने कहा कि भारतीय सेना ने पाकिस्तान में घुसकर सर्जिकल स्ट्राइक किया और वहां आतंकियों के ठिकानों को नष्ट किया। जवाब में ये वाम दल मांग करते रहे कि भारत सरकार सर्जिकल स्ट्राइक के प्रमाण प्रस्तुत करे।

वामदल अपने को गरीब-गुरबा के हितों का सबसे मुखर प्रवक्ता बताते हैं। जरा कोई बता दे कि इन्होंने हाल के वर्षों में कब महंगाई, बेरोजगारी, गरीबी जैसे सवालों पर कोई आंदोलन छेड़ा हो। सारा देश राष्ट्र एकता और अखंडता के सवालों पर एक है। पर ये वामदल अपने तरीके सोच रहे हैं। इनके येचुरी तथा करात सरीखे नेता सिर्फ कैंडिल मार्च निकाल सकते हैं या केरल में आर.एस.एस. के कार्यकर्तायों की निर्मम हत्याएं भर करवा सकते हैं। इसलिए अब इन्हें जनता खारिज करती जा रही है।

देश ने इनका पहली बार असली चेहरा देखा 1962 में चीन से जंग के वक्त। तब भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी(भाकपा) ने राजधानी के बारा टूटी इलाके में चीन के समर्थन में एक सभा तक आयोजित करने की हिमायत की थी। हालांकि वहां पर मौजूद लोगों ने तब आयोजकों को अच्छी तरह पीट दिया था। इसके अलावा वामदलों के अधिकतर राज्यों में सिकुड़ने का

एक अहम कारण यह भी है कि इनके गैर जिम्मेदाराना हरकतों से छोटी-बड़ी फैक्ट्रियां बंद होती रही हैं। इसके चलते वामपंथी ट्रेड यूनियन आंदोलन कमजोर हो गया और वाम नेता दूसरे किसी मुद्दे पर कोई विशेष छाप नहीं छोड़ सके।

नहीं जुड़ रहे युवा

इनसे अब नौजवान नहीं जुड़ पा रहे हैं। माकपा के कुल सदस्यों में मात्र 6.5 फीसद ही 25 साल से कम उम्र के हैं। माकपा का नेतृत्व तो बुजुर्गों से भरा है। यानी माकपा से नौजवानों का मोहभंग होता जा रहा है। एकदौर में देश के विश्व विद्लायों में लेफ्ट पार्टियों की धाक रहती थी। युवा वामदल से कम्युनिस्ट विचारधारा से जुड़ते थे, क्योंकि इसमें श्रमिक, कमजोर, गरीब महिला के हकों की बात होती थी। इंद्रजीत गुप्ता, ज्योतिबसु, सोमनाथ चटर्जी जैसे वाम नेताओं का सभी सम्मान करते थे। पर कमोबेश बाकी वाम दलों के नेताओं के अपनी विचारधारा के साथ ही छल करने के कारण युवा भी इनसे दूर होने लगे। अब तो कोई चमत्कार ही वाम दलों को प्रासंगिक कर सकता है।

(लेखक यूएई दूतावास में सूचनाधिकारी रहे हैं। वरिष्ठ स्तंभकार हैं। ये उनके निजी विचार हैं।)